धर्म-निरपेक्षताः मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना
Dharmnirpekshta : Majhab nahi sikhata aapas me bair rakhna

'धर्म-निरपेक्षता' शब्द सर्वप्रथम प्रचलन में यूरोपीय देशों में आया। यूरोप में एक समय ऐसा भी था जब धर्म गुरूओं के दमन-चक्र में साधारण जनता पिस रही थी। फलतः उन देशों में क्रांति के द्वारा धार्मिक तानाशाही को खत्म किया गया। लोगों ने तदनन्तर जीवन के प्रति तर्कसंगत और वैज्ञानिक दृष्टिकोण स्वीकार किया। इसी परिवर्तित दृष्टिकोण को धर्म-निरपेक्षता कहा गया है। भारत ने इस धर्म निरपेक्षता को स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद संशोधित रूप में स्वीकार किया। भारत ने धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना की, धर्म निरपेक्ष समाज की नहीं। यह बड़ा सूक्ष्म विभेद है। भारत ने राजनीति पर किसी धर्म विशेष के प्रभाव को अस्वीकार कर दिया और उसने सभी धर्मों के प्रति समान मैत्री एवं समान दूरी की नीति अपनाई।

भारत मे हिंदू, मुसलमान, बौद्ध, सिख, ईसाई, जैन आदि अनेक धर्मों के लोग साथ-साथ रहते हैं। जबकि इनमें से बहुत लोग कई बातों में एक-दूसरे के विरोधी विश्वासों के लोग हैं। इतिहास साक्षी है कि भारम में धार्मिक मतभेद तथा संघर्ष बराबर होते रहे हैं लेकिन विगत तीन हजार वर्षों में भी धार्मिक मतभेद के नाम पर कोई भीषण संघर्ष या युद्ध नहीं हुआ जिसे ऐतिहासिक माना जाए। भारत में असहिष्णुता के परिणामस्वरूप कभी यूरोप की भांति सामूहिक हत्याएं और धार्मिक युद्ध नहीं हुआ। मुस्लिम शासन काल से पूर्व या उनके शासन काल में भी धर्म-गुरूओं और शासकों या जनता के बीच संघर्ष का कोई उल्लेख नहीं मिलता। कट्टर मुस्लित शासकों ने भी इस देश में इस्लामी राज्य की स्थापना नहीं की, बल्कि अधिंकाश शासकों ने तो अपने प्रशासन में हिन्दुओं को भी महत्वपूर्ण पद दिए। अंग्रेजों ने जब यहां शासन स्थापित किया तब धर्म के मामले में उन्होनें भी तटस्थता की नीति अपनाई। उनकी शासन नीति में धर्म, जाति, भाषा आदि के भेद-भाव का कोई स्थान नहीं था। बीसवीं शताब्दी में राजनीतिक कारणों से अंग्रेजों ने भले ही 'फूट डालो शासन करां' की नीति अपनाई।

भारत में इन्हीं कारणों से 1931 में कराची अधिवेशन में कांग्रेस द्वारा पारित प्रस्ताव में ऐसी धाराएं शामिल की गई जिनका तात्पर्य था, सभी नागरिक कानून की दृष्टि

से बराबर होंगे और प्रशासन सभी धर्मों के प्रति तटस्त रहेगा। हालांकि भारतीय संविधान की प्रस्तावना में 'धर्म निरपेक्ष' शब्द का औपचारिक समावेश 1976 में किया गया।

भारतीय संविधान मे स्पष्ट कहा गया है कि राज्य धर्म के आधार पर किसी भी नागरिक के साथ भेदभाव नहीं करेगा। सरकारी रोजगार के मामले में धर्म के आधार पर किसी को अयोग्य नहीं घोषित किया जाएगा। प्रत्येक व्यक्ति को अपनी अन्तर्रात्मा के अनुसार किसी भी धर्म को अपनाने और उसका प्रचार-प्रसार करने की स्वतंत्रता दी गई है। सभी धार्मिक संस्थाएं अपने शिक्षण-संस्थान स्थापित कर सकती हैं। सरकारी संस्थान धार्मिक शिक्षाएं नहीं दे सकेंगे। किसी भी धर्मावलम्बी को अन्य धर्मों की निंदा करने या अन्य धर्मावलम्बियों से घृणा तथा शत्रुतापूर्ण व्यवहार करने की स्वतंत्रता नहीं दी गई है। धार्मिक स्वतंत्रता, सार्वजनिक शांति, नैतिकता एवं स्वास्थय की सीमाओं में ही दी गई है।

भारत में धर्म निरपेक्षता के प्रचार-प्रसार में सर्वाधिक महत्वपूर्ण समस्या है- समान नागरिक संहिता की समस्या। समान नागरिक संहिता सारे भारतीयों को समान नागरिकता के सूत्र में बांध सकती है। लेकिन आजादी प्राप्ति के बाद कई दशक बीतने पर भी यह संभव नहीं हो सका। बल्कि 1986 में कट्टरवादी मुसलमानों ने सरकार को तलाकशुदा महिलाओं के भते से सम्बन्धित कानून बनाने के लिए विवश कर दिया। इस कार्य द्वारा सरकार ने धर्मनिरपेक्षता के सिद्धांत की अवहेलना की। यही बात सिख, ईसाई आदि वर्गों के साथ भी है जो शायद ही समान नागरिक संहिता को मान्यता दे सकें। भारत जैसे उदार लोकतंत्र द्वारा किसी अल्पसंख्यक वर्ग की उपेक्षा करना बहुत कठिन है।

दूसरी उल्लेखनीय बात यह है कि हमारी राजनीतिक गतिविधियों में साम्प्रदायिकता, जातीयता, क्षेत्रीयता जैसी भावनाएं गहराई तक प्रवेश कर गई हैं और हम चाहकर भी उन्हें नहीं रोक पा रहे हैं। हमारी राजनीतिक व्यवस्था उन संकीर्णतावादी प्रवृतियों के दबाव से उबर नहीं पा रही है और हम धर्म निरपेक्ष राज्य की स्थापना नहीं कर पा रहे हैं। इसके लिए नेतृत्व की विफलता ही काफी हद तक उत्तररदायी है। तीसरी समस्या 'सांस्कृतिक प्रतीकों' की है, जो स्वाभावतः राष्ट्रीय संस्कृति बन गए हैं। हमारे नेताओं ने भारतीय उपसंस्कृति के समन्वय द्वारा राष्ट्रीय संस्कृति का विकास नहीं किया, फलतः यह समस्या पैदा हो गई है। साथ ही धर्म निरपेक्षता को केवल राज्य तक सीमित कर देने के कारण अलग-अलग उपसंस्कृति और धार्मिक पहचान का प्रबल हो जाना स्वाभाविक है।

नेहरू जी का कहना था कि जनता की आर्थिक परिस्थितियों का सुधार करके धार्मिक मतभेदों को सहज ही दूर किया जा सकता है। लेकिन भारत में आशा व्यर्थ है कि निकट भविष्य में यह देश आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न हो सकेगा। इसका अन्य विकल्प है 'शिक्षा' जो अर्थ से अधिक महत्वपूर्ण है। युवा मस्तिष्क पर नये मूल्यों तथा नये विचारों का अधिक तेजी से प्रभाव पड़ता है। युवा-वर्ग स्वभावतः प्राप्त ज्ञान के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण से काम लेता है। उस पर अंधविश्वासों का कोई उल्लेखनीय प्रभाव नहीं पड़ता है। अतः भारत की भावी पीढ़ी को यदि उचित शिक्षा दी जाए तो आने वाला युग धर्म निरपेक्षता का युग होगा। हमारे यहां कई ऐसी संस्थाएं हैं जो इस दिशा में महत्वपूर्ण कार्य कर रही हैं। शिक्षण संस्थानों के अतिरिक्त स्वैच्छिक संस्थाएं ज्ञी समाज व्याप्त कुरीतियों और संस्कारों को सहज ही विनष्ट कर सकती हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि रामकृष्ण मिशन, आर्य समाज, ब्रह्म समाज जैसी संस्थाओं ने इस दिशा में उल्लेखनीय कार्य किए हैं।

भारत में राष्ट्रीय अखण्डता की रक्षा हेतु धर्म निरपेक्षता अनिवार्य शर्त है। राष्ट्रीयता की भावना किसी भी धर्म के विरूद्ध न होकर धार्मिक कट्टरता के विरूद्ध है। राष्ट्र के प्रत्येक नागरिक के हदय में सभी धर्मों के प्रति उतनी ही श्रद्धा एवं निष्ठा की आवश्यकता है जितनी उसमें स्वधर्म के प्रति है। जब मंदिर, मस्जिद, गुरूद्वारा, गरिजाघर, बौद्ध अथवा जैन मंदिर जैसे धर्म स्थल सभी धर्म स्थल सभी धर्मावलम्बियों के पारस्परिक स्नेह-सौहार्द्र के केन्द्र बन सकेगे तभी भारतीयता सुरक्षित एवं सुखद बन सकेगी। अखण्ड भारत ने केवल राजनीतिक वरन सामाजिक धर्मनिरपेक्षता चाहता है। एतदर्थ, भारतीयों में उदारता, सहदयता एवं सहिष्णुता जैसे गुण नितान्त अपेक्षित हैं और भारतीयों में कभी भी इन गुणों का अभाव नहीं रहा है। धर्मनिरपेक्षता हमें धर्मविहीन नहीं बनाती वरन हमारे हदय में सभी धर्मों के प्रति स्नेह एवं श्रद्धा का भाव जगाती है। 'मजहब नहीं सिखाता आपस में वैर रखना', फिर भी मजहब के नाम पर दंगे-फसादों का क्या अर्थ है। धर्म का आदेश है- 'सर्वे भवन्तु सुखिनः।'